त्यागाय संभृतार्थानां सत्याय मितभाषिणाम् ।

यशसे विजिगीषूणां प्रजायै गृहमेधिनाम्।।7।।

अन्वयः त्यागाय संभृतार्थानां सत्याय मितभाषिणाम् यशसे विजिगीषूणां प्रजायै गृहमेधिनाम्।

अनुवादः त्याग (दान) के लिए ही धन का संग्रह करने वाले, सत्य के लिए कम बोलने वाले (कहीं मुख से असत्य न निकल पड़े, इसलिए) अपने यश के लिए (न कि दूसरे राज्य को छीनने के लिए) विजय प्राप्त करने की इच्छा करने वाले, संतानोत्पत्ति मात्र के लिए (न कि कामोपभोग के लिए) गृहस्थ बनने वाले (विवाह करने वाले) रघुवंशी राजाओं का वर्णन करूंगा।

टिप्पणियां

त्यागायः वे दूसरों को देने के लिए ही धन का संग्रह करते थे। कुछ ही लोगों की जेब में सारा धन एकत्रित न हो इस उद्देश्य से प्राचीन भारत में समाज कल्याण के चिन्तकों ने दान की महिमा का बढ़-चढ़ कर वर्णन किया है। दान से धन की शोभा मानी गई है। दान से स्वर्ग प्राप्त होता है। इस प्रकार दान देते रहने से धन एक स्थान पर एकत्रित नहीं होता और निर्धनों को धन मिलने से समाज में शान्ति बनी रहती है। संन्यासाश्रम में प्रवेश करते समय व्यक्ति के लिऐ 'सर्ववेदस्' यज्ञ करना आवश्यक था जिसमें उसे अपना सारा सर्वस्व (सम्पत्ति) 'सर्वस्वदान' के रूप में दूसरों को देना पड़ता था। त्याग भावना के लिए देखें **''मा गृधः कस्य स्विद्धनम्''** (ईशावास्योपनिषद्)। सूर्यवंशी राजा भी इस परम्परा का पालन करते थे। वे धन का स्वयं भोग न कर दूसरों को दान में देकर प्रसन्न होते थे। मल्लिनाथ के अनुसार यहां ''चतुर्थी तदर्थार्थबलिहितसुखरक्षितैः'' सूत्र से चतुर्थी का प्रयोग अधिक उपयुक्त है।

सम्भृतार्थानां सम्भृतः (सम उपसर्ग़धातु भृ) अर्थः यैस्तेः सम्भृतार्थाः (बहुव्रीहि), तेषाम्। जिन्होंने धन एकत्रित किया है (त्यागाय)।

यशसे विजिगीषूणाम् विजेतुम् इच्छूनाम्। वि उपसर्ग़जि धातुसन्उ, षष्ठी बहुवचन। वे यशप्राप्ति के लिए विजय की कामना करते थे, दूसरों का राज्य हड़पने के लिए नहीं। प्राचीन भारत में युद्ध सदा विरोधी राजाओं के राज्य को हड़पने के लिए नहीं किये जाते थे। परन्तु कई बार युद्ध करने वाले का उद्देश्य विरोधी राजाओं पर अपने शौर्य पराक्रम का प्रभुत्व जमाकर अपना यश और नाम फैलाना ही होता था। सूर्यवंशी राजा भी यश के लिए युद्ध करते थे। **देखिये: ''जीतो मनहि सुनीय अस रामचन्द्र के राज''** (तुलसीदासकृत 'रामचरितमानस')

प्रजायै गृहमेधिनाम् गृह . मेध् णिनि। गृह का अर्थ है पत्नी- **''दारेष्वपि गृहा''** (अमरकोश) तथा ''जाया च गृहिणी गृहम्'' (हलायुध)। गृहमेधिन् का अर्थ है: गृहस्थी, विवाह करके गृहस्थाश्रम में निवास करने वाला। मल्लिनाथ ने इस शब्द की व्युत्पत्ति इस प्रकार दी है- **गृहैः दारैः (पत्नियों से) मेधन्ते (मिलते है) इति गृहमेधिनः, तेषाम्।**

विशेषः ऐसा माना जाता है कि जन्म से लेकर ही प्रत्येक हिंदू को तीन ऋण चुकाने होते हैं:

(1) देवऋण (देवताओं का ऋण), (2) पितृऋण (पितरों का ऋण) और (3) ऋषिऋण (ऋषियों का ऋण)। अग्नि में विभिन्न देवताओं के नाम से आहुति डालकर देवताओं का ऋण चुकता किया जाता है, पितरो को जल अर्पण करके तथा अनुकूल पत्नी से पुत्र को उत्पन्न करके पितरों का ऋण उतारा जाता है। प्रतिदिन स्वाध्याय (वेदों या शास्त्रों का अध्ययन) करने से ऋषियों का ऋण पूरा होता है।

इन विशेषणों से रघुवंशियों का परोपकारित्व, सत्यवचनत्व, यश:परत्व, पूर्वजों की शुद्धता दर्शाना अपेक्षित है। (मल्लिनाथ)